राजस्थान उच्च न्यायालय, जोधपुर

एस. बी. आपराधिक विविध तृतीय जमानत आवेदन सं. 14379/2020

पंकज डामोर पुत्र श्री कारीलाल डामोर, उम्र लगभग 22 वर्ष, निवासी-मकान नंबर 3/17, हाउसिंग बोर्ड, डूंगरपुर (राज.)

----याचिकाकर्ता

बनाम

राजस्थान राज्य ----प्रतिवादी

अपीलकर्ता(ओं) के लिए	:	श्री उमेश श्रीमाली
प्रतिवादी के लिए	:	श्री फरज़ंद अली, एएजी
		श्री ए.आर.चौधरी, पी.पी.

याचिकाकर्ता को धारा 306 सीआरपीसी के तहत सक्षम न्यायालय द्वारा क्षमादान दिया गया और एक अनुमोदनकर्ता बनाया गया - क्या धारा 482 सीआरपीसी के तहत अंतर्निहित शक्ति का प्रयोग किसी

अनुमोदनकर्ता को जमानत देने के लिए किया जा सकता है - नूर तकी @ मम्मू बनाम राजस्थान राज्य एआईआर 1987 राज.52 पर निर्भर - धारा 306(4)(बी) सीआरपीसी के अनुसार, अनुमोदनकर्ता को मुकदमे की समाप्ति तक हिरासत में रखा जाना चाहिए, साथ ही, असाधारण स्थिति में और उचित मामलों में, उच्च न्यायालय के पास सीआरपीसी की धारा 482 के तहत उसे जमानत पर रिहा करने की शक्ति है।

माननीय श्री न्यायमूर्ति संदीप मेहता

<u>आदेश</u>

घोषणा की तिथि : 15/12/2020

आरक्षित तिथि : 11/12/2020

<u>न्यायालय द्वारा:</u>

<u>रिपोर्टेबल</u>

सीआरपीसी की धारा 439 के तहत जमानत के लिए तीसरी अर्जी याचिकाकर्ता पंकज डामोर की ओर से दायर की गई है, जिसे 2.10.2016 को एफआईआर संख्या 182/2016 पी.एस.सदर, जिला डूंगरपुर के संबंध में धारा 302, 364, 394, 397, 347, 201 और 120बी आईपीसी के

तहत अपराध के लिए गिरफ्तार किया गया था।

याचिकाकर्ता पंकज डामोर की दूसरी जमानत अर्जी इस न्यायालय द्वारा दिनांक 6.10.2018 के आदेश द्वारा खारिज कर दी गई।

जमानत के लिए तत्काल तीसरे आवेदन के निपटान के लिए प्रासंगिक और आवश्यक संक्षिप्त तथ्य यहां नीचे दिए गए हैं।

पिंकेश सुथार (इसके बाद संक्षेप में 'मृतक' कहा जाएगा) 6.9.2016 को लापता हो गया, जिसके बाद उसके पिता रमेश चंद्र ने 8.9.2016 को पुलिस स्टेशन सदर, डूंगरपुर में गुमशुदगी की रिपोर्ट दर्ज कराई। पिंकेश का शव 30.9.2016 को पुलिस स्टेशन ऋषभदेव के अधिकार क्षेत्र में एक नदी से बरामद किया गया था, जिसके बाद श्री रमेश चंद्र ने पुलिस स्टेशन सदर, डूंगरपुर में रिपोर्ट दर्ज कराई, जिसके आधार पर अज्ञात हमलावरों के खिलाफ आईपीसी की धारा 364, 302, 392 और 201 के तहत अपराध के लिए एफआईआर संख्या 182/2016 दर्ज की गई। जांच के दौरान जांच अधिकारी ने कॉल डिटेल आदि जुटाई, जिसके आधार पर शक की सुई याचिकाकर्ता पंकज डामोर, सचिनपुरी गोस्वामी, सोहन पदमत और नीलेश सुथार की ओर गई। तदनुसार, इन सभी व्यक्तियों को गिरफ्तार किया गया और जांच के बाद आरोप पत्र दायर किया गया। आरोप-पत्र के अनुसार, अभियोजन का पूरा मामला पूरी तरह से परिस्थितिजन्य साक्ष्य पर आधारित है।

जब आरोपी याचिकाकर्ता उप-जेल, डूंगरपुर में कैद था, तो उसने पुलिस अधीक्षक, डूंगरपुर को एक आवेदन प्रस्तुत किया जिसमें कहा गया कि वह सच्चाई का खुलासा करने और राज्य के गवाह को बदलने का इच्छुक था। इस आवेदन पर सीआरपीसी की धारा 306 के तहत कार्यवाही की गई और याचिकाकर्ता को माफ़ कर दिया गया और मामले में सरकारी गवाह बना दिया गया। 2.10.2016 को अपनी गिरफ्तारी के बाद से, याचिकाकर्ता अभी भी हिरासत में है। मुकदमे के दौरान, याचिकाकर्ता से P.W. 5 के रूप में पूछताछ की गई। उन्होंने अभियोजन की कहानी का भरपूर समर्थन किया और बचाव पक्ष के वकील द्वारा बिना किसी हिचकिचाहट के लंबी जिरह की।

दिनांक 6.10.2018 के आदेश द्वारा याचिकाकर्ता की ओर से दायर जमानत के लिए दूसरे आवेदन को खारिज करते हुए, इस न्यायालय ने ट्रायल कोर्ट से आदेश की प्रति प्राप्त होने की तारीख से एक वर्ष की अवधि के भीतर मुकदमे का फैसला करने का अनुरोध किया। हालाँकि, कार्यवाही बचाव साक्ष्य के स्तर पर रुकी हुई प्रतीत होती है, जिसके बाद याचिकाकर्ता पंकज डामोर की ओर से जमानत के लिए तीसरी अर्जी दायर की गई है।

याचिकाकर्ता का प्रतिनिधित्व करने वाले अधिवक्ता श्री उमेश श्रीमाली ने अदालत का ध्यान ट्रायल कोर्ट के ऑर्डरशीट की ओर

आकर्षित किया, जो दर्शाता है कि अभियोजन साक्ष्य 6.12.2019 को बंद कर दिया गया था। सीआरपीसी की धारा 313 के तहत आरोपियों के बयान 3.3.2020 को दर्ज किए गए थे और उसके बाद, कोविड महामारी के कारण पैदा हुए गतिरोध के कारण मुकदमे की कार्यवाही रुक गई है। श्री उमेश श्रीमाली ने **एआईआर 1987 राज.52** में रिपोर्ट किए गए **नूर तकी @ मम्मू बनाम राजस्थान राज्य** के मामले में इस न्यायालय द्वारा दिए गए पूर्ण पीठ के फैसले और छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर द्वारा दिए गए दिनांक 15.7.2020 के एक अन्य फैसले **आपराधिक विविध याचिका संख्या 846/2020 "राजकुमार साहू बनाम छत्तीसगढ़ राज्य"** पर भरोसा जताया और आग्रह किया कि हालांकि एक अनुमोदनकर्ता 'स्ट्रिक्टो सेंसो' आरोपी नहीं है और इस प्रकार, उसे जमानत पर रिहा करने के लिए धारा 439 सीआरपीसी की प्रक्रिया का लाभ नहीं उठाया जा सकता है, लेकिन श्री श्रीमाली के अनुसार, धारा 482 सीआरपीसी के तहत इस न्यायालय को प्रदत्त अंतर्निहित शक्तियों का उपयोग अनुमोदनकर्ता को बड़ा करने के लिए किया जा सकता है। यानी यहां याचिकाकर्ता जमानत पर है। उन्होंने आग्रह किया कि याचिकाकर्ता ने सौदेबाजी के अपने हिस्से का सम्मान किया है, क्योंकि क्षमा किए जाने के बाद, जब अभियोजन पक्ष के गवाह के रूप में शपथ ली गई तो उन्होंने मामले का पूरी तरह से समर्थन किया और इस प्रकार, उन्हें आगे जेल में कैद रखने को उचित ठहराने का कोई कारण

नहीं है। उन्होंने आगे कहा कि याचिकाकर्ता का जीवन अन्य आरोपी व्यक्तियों के हाथों लगातार खतरे में है क्योंकि उसने एक सरकारी गवाह के रूप में उनके खिलाफ गवाही दी है। इस प्रकार, उन्होंने आग्रह किया कि सीआरपीसी की धारा 482 के तहत इस न्यायालय की अंतर्निहित शक्तियों का सहारा लेकर शेष मुकदमे के दौरान याचिकाकर्ता को जमानत पर रिहा करने का यह एक उपयुक्त मामला है।

श्री फरजंद अली, विद्वान अपर महाधिवक्ता, श्री ए.आर. चौधरी की सहायता से, विद्वान लोक अभियोजक बने, हालांकि उन्होंने याचिकाकर्ता के वकील द्वारा दी गई दलीलों का जोरदार विरोध किया लेकिन वह भी इस तथ्य पर विवाद करने की स्थिति में नहीं है कि याचिकाकर्ता ने एक अनुमोदनकर्ता के रूप में आरोपी व्यक्तियों के खिलाफ गवाही देकर सीआरपीसी की धारा 306 के तहत सौदे के अपने हिस्से का सम्मान किया है।

मैंने बार में दी गई दलीलों पर गहन विचार किया है और रिकॉर्ड पर उपलब्ध सामग्री का अध्ययन किया है।

याचिकाकर्ता को इस मामले में 2.10.2016 को आरोपी के रूप में गिरफ्तार किया गया था और वह पिछले 4 साल और 2 महीने से जेल में बंद है। राज्य का गवाह बनने के उनके आवेदन पर, उन्हें सीआरपीसी की धारा 306 के तहत सक्षम अदालत द्वारा माफ़ी दे दी गई और उन्हें

सरकारी गवाह बना दिया गया। याचिकाकर्ता ने सह-अभियुक्त व्यक्तियों के खिलाफ गवाही देकर सौदेबाजी के अपने पक्ष का सम्मान किया है। याचिकाकर्ता के बयान को पढ़ने पर, यह स्पष्ट है कि उसने बचाव पक्ष द्वारा की गई विस्तृत जिरह का सामना किया। कहने की जरूरत नहीं है कि सीआरपीसी की धारा 439 के प्रावधान याचिकाकर्ता के मामले पर लागू नहीं होंगे क्योंकि सीआरपीसी की धारा 306 के तहत माफी मिलने के बाद वह अब आरोपी नहीं है। हालाँकि, **नूर तकी @मम्मू (उक्त)** के मामले में इस न्यायालय की पूर्ण पीठ द्वारा की गई निम्नलिखित टिप्पणियाँ इस मामले में चारों तरफ से शामिल विवाद को कवर करती हैं:

> "16. दूसरे बिंदु को पहले लेते हुए, यह मानने का कोई सवाल ही नहीं है कि धारा 306(4)(बी) निर्देशिका है या अनिवार्य है क्योंकि संपूर्ण सीआरपीसी में कोई विशिष्ट प्रावधान नहीं है, जो अनुमोदनकर्ता को जमानत के लिए आवेदन करने का अधिकार देता है। जैसा कि धारा 439 के ऊपर बताया गया है, सी.आर.पी.सी. अनुमोदक पर लागू नहीं होती है। यह केवल 'अपराध के आरोपी व्यक्ति' पर लागू होता है। एक अनुमोदक को जब एक बार क्षमादान दे दिया जाता है, तो वह तब तक आरोपी नहीं

रहता जब तक कि वह क्षमादान की शर्तों का उल्लंघन नहीं करता और बाद में अपराध के लिए प्रयास नहीं करता। इसलिए सरकारी गवाह के तौर पर उसकी हैसियत गवाह की है, आरोपी की नहीं। ऐसा होने पर; धारा 439, सीआर.पी.सी. लागू नहीं होगी और परिणामस्वरूप इस बिंदु पर चर्चा कि क्या धारा 306(4)(बी) निर्देशिका है या अनिवार्य है, केवल एक अकादमिक अभ्यास है और वह भी व्यर्थ है। जहां तक सीआरपीसी की धारा 439 का प्रावधान संविधान के अनुच्छेद 21 का उल्लंघन है, यह कहना पर्याप्त है कि तर्क केवल खारिज करने के लिए आगे बढ़ाया गया है। अधिकार के तौर पर अनुमोदनकर्ता जमानत का दावा नहीं कर सकता और जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, उसे जमानत देने का कोई प्रावधान नहीं है। हम पहले ही ऊपर चर्चा कर चुके हैं कि किन कारणों से हमें विधानमंडल को किसी अनुमोदक को जमानत देने का प्रावधान नहीं करने के लिए राजी होना पड़ा। लेकिन इस विवाद में सहायता के लिए संविधान के अनुच्छेद 21 पर गौर किया जा सकता है कि इस न्यायालय की अंतर्निहित शक्तियों के दायरे को इस प्रकार समझाया जाना चाहिए ताकि उचित मामलों में जमानत

पर विचार करने के लिए एक अनुमोदक के मामलों को कवर किया जा सके। फ्रांसिस कोरालिस मुलिन के मामले (1981 सीआरआई एलजे 306) (एससी) (उक्त) में, सुप्रीम कोर्ट के उनके प्रभुत्व ने संविधान के अनुच्छेद 21 के दायरे को परिभाषित किया। उस मामले में याचिकाकर्ता ने COFEPOSA अधिनियम के तहत अपनी हिरासत को चुनौती दी थी और हिरासत आदेश के कुछ खंडों की संवैधानिक वैधता को चुनौती देते हुए एक तर्क दिया गया था। उनके आधिपत्य ने कहा, "अनुच्छेद 21 के नुस्खे का अनुपालन सुनिश्चित करने के लिए यह पर्याप्त नहीं है कि किसी व्यक्ति को उसके जीवन या व्यक्तिगत स्वतंत्रता से वंचित करने के लिए कुछ प्रक्रिया निर्धारित करने वाला कानून होना चाहिए, लेकिन कानून द्वारा निर्धारित प्रक्रिया उचित, निष्पक्ष और उचित होनी चाहिए और यदि ऐसा नहीं है, तो कानून अनुच्छेद 21 की गारंटी का उल्लंघन करने के रूप में अमान्य होगा। इस न्यायालय ने अनुच्छेद 21 में निहित जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अधिकार के दायरे और दायरे का विस्तार किया और मौलिक अधिकारों के इस सबसे मौलिक विस्तार को

बढ़ाते हुए कानून के भविष्य के विकास के लिए बीज बोया।

अब स्थिति यह है कि मेनका गांधी के मामले (उक्त) में व्याख्या की गई धारा 21 में कहा गया है कि कानून द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अलावा किसी को भी उसके जीवन या व्यक्तिगत स्वतंत्रता से वंचित नहीं किया जाएगा और यह प्रक्रिया उचित, निष्पक्ष और उचित होनी चाहिए और मनमाना, सनकी या काल्पनिक नहीं होनी चाहिए और न्यायिक समीक्षा की अपनी संवैधानिक शक्ति का प्रयोग करते हुए न्यायालय को यह तय करना है कि किसी दिए गए मामले में जीवन या व्यक्तिगत स्वतंत्रता से वंचित करना प्रक्रिया द्वारा है, जो उचित, निष्पक्ष और न्यायसंगत है या अन्यथा है।

17. कदरा पहाड़िया के मामले में (1981 सीआरआई एलजे 481) (एससी) (उक्त), माननीय श्री पी.एन. भगवती, जे. (जैसा कि वह तब थे) माननीय ए.पी. सेन, जे. के साथ बैठकर एक पत्र डीटी पर विचार किया। 28 नवंबर, 1980 को बिहार राज्य के संथाल परगना में कार्यरत एक शोधकर्ता और सामाजिक वैज्ञानिक डॉ. वसुधा धागमवार

ने संबोधित किया। यह जेलों में बंद विचाराधीन कैदियों के प्रति हमारी कानूनी और न्यायिक प्रणाली की घोर संवेदनहीनता और उदासीनता का एक और उदाहरण प्रस्तुत करता है। नोटिस जारी करने से पहले उनके आधिपत्य ने एक विस्तृत आदेश पारित किया और संविधान के अनुच्छेद 21 के दायरे पर विचार किया और कहा, "हम यह समझने में असफल हैं कि हमारी न्याय प्रणाली इतनी अमानवीय क्यों हो गई है कि वकीलों और न्यायाधीशों में लोगों को बिना सुनवाई के वर्षों तक जेल में रखने पर विद्रोह की भावना महसूस नहीं होती है। यह समझना मुश्किल है कि सत्र न्यायाधीश कैसे भूल गए होंगे कि उन्होंने याचिकाकर्ताओं को 30 अगस्त, 1977 को मुकदमा शुरू करने के लिए अदालत में बुलाया था और उसके बाद इस मामले में कुछ नहीं किया।

18. उनके आधिपत्य ने हुसैनारा खातून के मामले (1979 सीआरआई एलजे 1036) (एससी) (उक्त) का उल्लेख किया, जिसमें यह माना गया है कि त्वरित सुनवाई संविधान के अनुच्छेद 21 में निहित आरोपी का मौलिक अधिकार है। हुसैनारा खातून का मामला, जो AIR 1979

SC 1377: (1979 Cri LJ 1052) में दर्ज किया गया है, इस देश के न्यायिक इतिहास में एक मील का पत्थर है। कई विचाराधीन कैदियों के मामलों पर विचार किया गया, जो वर्षों से जेल में बंद हैं। उनमें से कुछ ऐसे थे जहां विचाराधीन कैदी बिना किसी मुकदमे के जेल में उस अधिकतम अवधि से अधिक समय तक बंद रहे जिसके लिए उन्हें दोषी ठहराया जाना था। उन्हें जमानत बांड प्राप्त किए बिना भी रिहा करने का निर्देश दिया गया। महामहिम श्री न्यायमूर्ति भगवती ने न्यायालय की ओर से बोलते हुए कहा:

"हम यह देखने में असफल हैं कि राज्य के पास इन दुर्भाग्यपूर्ण व्यक्तियों को बिना किसी मुकदमे के इतने लंबे समय तक अनुचित रूप से हिरासत में रखने का क्या नैतिक या नैतिक औचित्य हो सकता है। हमें राहत की भावना महसूस होती है कि उन्हें एक बार फिर से आजादी की हवा में सांस लेने में सक्षम होना चाहिए। लेकिन हमने पाया कि अभी भी कई विचाराधीन कैदी हैं जो इस श्रेणी के व्यक्तियों में आते हैं जो बिना मुकदमा शुरू किए अधिकतम अवधि से अधिक समय तक हिरासत में रहे

हैं। 59 विचाराधीन कैदी हैं जिनके नाम और विवरण इस चार्ट में दिए गए हैं और हम निर्देश देते हैं कि उन्हें तुरंत रिहा किया जाना चाहिए क्योंकि उनकी निरंतर हिरासत स्पष्ट रूप से अवैध है और संविधान के अनुच्छेद 21 का उल्लंघन है।

19. सुनील बत्रा बनाम दिल्ली प्रशासन: 1980 सीआरआई एलजे 1099: (एआईआर 1980 एससी 1579), और एआईआर 1979 एससी 1360: (1979 सीआरआई एलजे 1036) में रिपोर्ट किए गए हुसैनारा खातून के एक और मामले जैसे कई अन्य मामलों के साथ उपरोक्त मामलों का अवलोकन, हमें यह मानने में कोई हिचकिचाहट नहीं है कि कानून की उचित प्रक्रिया के तहत भी किसी व्यक्ति को हिरासत में लिया गया है। उचित, निष्पक्ष और न्यायपूर्ण होना चाहिए और यदि ऐसा नहीं है, तो यह संविधान के अनुच्छेद 21 का उल्लंघन होगा। आपराधिक प्रक्रिया संहिता के प्रावधानों के तहत उचित शीघ्र सुनवाई की आवश्यकता होती है और यदि ऐसा नहीं किया जाता है और एक अनुमोदक को प्रत्येक मामले की परिस्थितियों में उचित मानी जा सकने वाली अवधि से अधिक अवधि

के लिए हिरासत में लिया जाता है, तो इस न्यायालय के पास हमेशा अपनी अंतर्निहित शक्तियों का प्रयोग करते हुए उसकी हिरासत को अवैध घोषित करने या उसे जमानत देने की शक्ति होती है। सीआरपीसी की धारा 482, इस न्यायालय को तीन परिस्थितियों में व्यापक शक्ति प्रदान करती है। सबसे पहले, जहां न्यायालय के किसी आदेश को प्रभावी करने के लिए क्षेत्राधिकार का इस्तेमाल किया जाता है। दूसरा, यदि न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग होता है और तीसरा, न्याय के उद्देश्य को सुरक्षित करने के लिए। ऐसे अवसर हो सकते हैं जहां अनुमोदक का मामला बाद की दो श्रेणियों में आ सकता है। उदाहरण के लिए, ऐसे मामले में जहां बड़ी संख्या में गवाह हैं, मुकदमे में लंबी अवधि लगती है, जहां अनियमितताएं और अवैधताएं की गई हैं, अदालत द्वारा फिर से मुकदमा चलाने का आदेश दिया जाता है और ऐसा करते समय, आरोपी व्यक्तियों को जमानत पर रिहा कर दिया जाता है, न्याय के उद्देश्य को सुरक्षित करने के लिए अनुमोदक की रिहाई का अवसर दिया जाएगा। इसी तरह, ऐसे मामले भी हो सकते हैं कि अदालत की प्रक्रिया का दुरुपयोग हो सकता है और आरोपी एक के बाद एक फरार होकर

कार्यवाही में देरी करने की कोशिश कर रहे होंगे, अनुमोदक अनुग्रह की मांग के लिए इस अदालत से संपर्क कर सकता है। लेकिन यह भी प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करेगा। मोटे तौर पर, पैरामीटर तो दिए जा सकते हैं लेकिन कोई कठोर नियम निर्धारित नहीं किया जा सकता। उदाहरण के लिए, एक अनुमोदक, जिसकी पहले ही जांच हो चुकी है और उसने अभियोजन पक्ष के संस्करण का समर्थन किया है, और इस तथ्य के साथ क्षमा की शर्तों का भी उल्लंघन नहीं किया है कि मुकदमे का कोई प्रारंभिक अंत दिखाई नहीं दे रहा है, तो उसे धारा 482, सीआर.पी.सी. के तहत शक्तियों का उपयोग करके रिहा किया जा सकता है। धारा 482, सीआर.पी.सी. केवल उच्च न्यायालय को शक्ति देती है। सत्र न्यायाधीश उसी के प्रावधानों को लागू नहीं कर सकते। इसलिए उच्च न्यायालय उपयुक्त मामलों में किसी अनुमोदक की रिहाई की समीचीनता की जांच कर सकता है। हम विद्वान लोक अभियोजक के इस तर्क को स्वीकार करने के इच्छुक नहीं हैं कि चूंकि धारा 306(4)(बी), सीआर.पी.सी., धारा 482, सीआर.पी.सी. के तहत एक विशिष्ट रोक है, इसलिए इसे लागू किया जाना चाहिए।

सर्वोच्च न्यायालय के आधिपत्य ने बिना किसी संख्या के कहा है कि संहिता में सीआरपीसी की धारा 482 के तहत उच्च न्यायालय की शक्तियों को बाधित करने वाला कुछ भी नहीं है। भले ही धारा 482, सीआर.पी.सी. में उल्लिखित तीन उद्देश्यों के लिए अलग-अलग प्रावधानों में कोई रोक है, और उद्धृत एक स्पष्ट उदाहरण यह है कि हालाँकि धारा 397 अंतर्वर्ती आदेशों में हस्तक्षेप पर रोक लगाती है फिर भी धारा 482, सीआर.पी.सी. को असाधारण मामलों में लागू किया गया है। उसी याचिकाकर्ता द्वारा दूसरा पुनरीक्षण वर्जित है, फिर भी असाधारण मामलों में यह न्यायालय सीआरपीसी की धारा 482 के प्रावधानों को लागू करता है। इसलिए, सीआरपीसी की धारा 482 इस न्यायालय को पर्याप्त शक्ति प्रदान करती है। हालाँकि, असाधारण मामलों में अनुमोदनकर्ता को जमानत पर रिहा करने के लिए, हम इस प्रश्न का उत्तर देते हैं कि धारा 306(4)(बी), सीआर.पी.सी. के अनुसार, अनुमोदक को मुकदमे की समाप्ति तक हिरासत में रखा जाना चाहिए, यदि वह पहले से ही जमानत पर नहीं है, साथ ही, असाधारण और उचित मामलों में उच्च न्यायालय के पास धारा 482,

सीआरपीसी के तहत उसे जमानत पर बढ़ाने की शक्ति है या यदि ऐसी परिस्थितियां हैं जो सुझाव देती हैं कि उसकी हिरासत इतनी लंबी हो गई थी, जो अन्यथा सजा की अवधि को समाप्त कर देगी, यदि दोषी ठहराया जाता है, तो उसकी हिरासत को संविधान के अनुच्छेद 21 के उल्लंघन के रूप में अवैध घोषित किया जा सकता है।"

ऊपर की गई चर्चा के मद्देनजर, मेरी दृढ़ राय है कि यह सीआरपीसी की धारा 482 द्वारा इस न्यायालय को प्रदत्त अंतर्निहित शक्तियों के प्रयोग के लिए उपयुक्त मामला है, ताकि शेष मुकदमे के दौरान याचिकाकर्ता को जमानत पर रिहा किया जा सके।

इस प्रकार, सीआरपीसी की धारा 439 के तहत जमानत के लिए याचिकाकर्ता के आवेदन को विचारणीय न मानते हुए, मैं सीआरपीसी की धारा 482 के प्रावधानों के आधार पर उच्च न्यायालय को प्रदत्त अंतर्निहित शक्तियों का प्रयोग करता हूं और निर्देश देता हूं कि याचिकाकर्ता पंकज डामोर, जिसे एफआईआर संख्या 182/2016 पी.एस.सदर, जिला डूंगरपुर के संबंध में गिरफ्तार किया गया था, को 80,000/- रुपये के निजी बांड और दो जमानती जमा करने पर जमानत पर रिहा किया जाएगा। सुनवाई की सभी तारीखों पर और जब

भी बुलाया जाए, ट्रायल कोर्ट की संतुष्टि के लिए प्रत्येक को 40,000/- रुपये की राशि दी जाएगी।

इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि याचिकाकर्ता ने सह-अभियुक्त व्यक्तियों के खिलाफ गवाही दी है, पुलिस अधीक्षक, डूंगरपुर को यह सुनिश्चित करने का निर्देश दिया जाता है कि याचिकाकर्ता को उचित सुरक्षा प्रदान की जाए।

उपरोक्त निर्देशों के साथ, जमानत के लिए तत्काल तीसरे आवेदन का निस्तारण किया जाता है।

न्यायाधीश, (संदीप मेहता)

(अनुवाद एआई टूल: SUVAS के माध्यम से अनुवादक की मदद से किया गया है।)

अस्वीकरण: स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय का उपयोग वादी को अपनी भाषा में समझने के लिए सीमित उपयोग के लिए किया जाता है और इसका उपयोग किसी अन्य उद्देश्य के लिए नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त होगा।